

संपादकीय

'भारतबोध' पत्रिका का यह चौथा अंक है। अपेक्षा है कि सिख गुरु परम्परा की उपस्थिति पर केन्द्रित यह अंक सुधी पाठकों की 'भारतीयता के बोध' को समृद्ध बनाएगा। भारत के ऐश्वर्य से आकर्षित होकर यवन, पठान, मुगल, डच, फ्रांसीसी, पुर्तगाली, अंग्रेज इत्यादि विदेशी आक्रान्ता आये और अपनी सामर्थ्यनुसार लूट कर ले गये। इन आक्रान्ताओं से लड़ने के लिए समय-समय पर भारतीय महापुरुषों ने शस्त्र और शास्त्र को धारण किया। इस संदर्भ में श्रीमद्भागवत गीता का यह श्लोक याद आता है-

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।

अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।

धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।

मध्यकाल का प्रारम्भ ही भक्ति केन्द्रित है। भक्ति एक संवाद-सेतु बनकर उभरी। प्रश्न खड़ा होता है कि हम भक्तिको समझें कैसे? क्या यह सिर्फ भजन-कीर्तन है? अपनी अखिल भारतीयता में भक्ति कीर्तन-मंडली नहीं है। आठवीं शताब्दी में केरल के कलाडी से निकले आदि शंकराचार्य, दसवीं ग्यारहवीं शताब्दी में तमिलनाडू के श्रीपेरंबदूर से निकले रामानुजाचार्य, तेरहवीं शताब्दी में वर्तमान कर्नाटक के दक्षिण कन्नड़ जिले के उडुपी शिवल्ली के पास स्थित पाजक नामक गाँव से निकले मध्वाचार्य, चौदहवीं शताब्दी में वर्तमान प्रयाग से निकले रामानंदाचार्य, पंद्रहवीं शताब्दी में वर्तमान दक्षिण भारत के कंकरवाड से निकले बल्लभाचार्य, पंद्रहवीं शताब्दी में वर्तमान असम प्रान्त के नौगाँव के बरदोवा नामक स्थान से निकले श्रीमंत शंकरदेव और पंद्रहवीं शताब्दी में ही वर्तमान पाकिस्तान के ननकाना साहिब से निकले गुरु नानकदेव सहित सिख गुरुओं की पूरी परम्परा में क्या समानता है? वह कौन बिंदु है जहाँ ये महानुभाव संवाद करते नजर आते हैं? वह बिंदु है - सांस्कृतिक सहभाव। आप पूरी भक्ति परम्परा का मूल्यांकन कर लीजिए, सभी संतों के यहाँ एक तथ्य सर्वमान्य ढंग से मिलेगा और वह है- सांस्कृतिक सहभाव। भारतवर्ष को समझने का सहभाव, तीर्थ सहभाव और जानार्जन का सहभाव। मैंने जिन महानुभावों का नाम लिया उनके जीवन का एक बड़ा हिस्सा यात्राओं में बीतता है। ऐसा क्यों है? क्या ऐसा अनायास है? ऐसा अनायास नहीं है। भारतीय दार्शनिक बोध में जीवन एक यात्रा है। हमारे दार्शनिक मूल्य जीवन को काल की गति को समर्पित यात्रा के रूप मानते हैं। हमारे वांग्मय यात्रा की परिकल्पना संस्कार के रूप में करते हैं। हमारे ज्ञान की वाचिक परम्परा संवाद से पुष्ट होती है। यह संवाद यात्रा से संभव हुआ है। भारतीय पुराख्यान, वैदिक साहित्य, संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक इसके प्रमाण हैं। वैदिक ग्रंथों में पुरुजन, यदुजन और भरतजन यात्रा के क्रम में युद्ध नहीं करते थे। यात्राएँ सांस्कृतिक और व्यापारिक प्रसार के उद्देश्य से प्रेरित होती थीं। बौद्ध और जैन आदिग्रंथों में भी 'धम्मविजय' के लिए होने वाली यात्राओं की चर्चा मिलती है। बुद्ध की 'धम्म' प्रचार यात्राएँ सर्वज्ञात हैं। 'प्राग्ज्योतिका' का यह अंक सिख गुरुओं के योगदान पर केन्द्रित है। इन महानुभावों के चिंतन का मूल्यांकन करते हुए हम पाते हैं कि इनका धार्मिक- सांस्कृतिक बोध भारत-बोध

की निष्पत्ति है। यह ध्यान रखिये कि सिख गुरुओं का भाषाबोध उनके भारतबोध से बनता है। यह भारतबोध उनके यात्राबोध की निष्पत्ति है।

श्री गुरु नानकदेव जी ने चौबीस साल में दो उपमहाद्वीपों के साठ प्रमुख शहरों की पैदल यात्रा की। इस यात्रा के दौरान उन्होंने अठाईस हजार किलोमीटर का यात्रा की। उनकी यात्राओं का उद्देश्य समाज में स्थित वर्ग-वर्ण के भेद को मिटा कर आपसी सद्भाव और समरसता स्थापित करना था। वे जहाँ भी गए एक परमात्मा की बात की और सभी को उसी की संतान बताया। उनकी यात्राएं आज भी संवाद स्थापित करने का रास्ता बन सकती हैं। महत्वपूर्ण विषय यह है कि गुरुजी इन यात्राओं के दौरान रास्ते में पड़ने वाली हर रियासत के राजा या बादशाह से मिले और उन्हें ये बातें समझाईं। इस बात के प्रमाण हैं कि वर्तमान असम के शिवसागर जिले के नाजिरा में दिखू नदी के पास जो मंदिर है वहाँ एक लुनिया सिद्ध की समाधि है। स्थानीय सिख समुदाय के लोग बताते हैं कि इस स्थान पर गुरु नानकदेव जी की श्रीमंत शंकरदेव जी से मुलाकात हुई थी। गुरु नानकदेव जी के नाजिरा यात्रा का उल्लेख तवारीख गुरु खालसा में भी मिलता है। तवारीख गुरु खालसा को शब्दशः उद्धृत कर रहा हूँ- अजमेरीगंज, करीमगंज, सिलहट के भ्रमण के उपरांत गुरु नानकदेव जी घरगाँव नामक शहर पहुँचे जो बाद में नाजिरा कहलाया। यह घरगाँव तब राजा शंकरसेन की राजधानी के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त शहर था। ज्ञानी लाल सिंह ने भी गुरु नानकदेव जी के घरगाँव जाने का वर्णन किया है। भाई वीरसिंह ने श्री कलगीधर चमत्कार और श्री दसमगुरु चमत्कार में दूबरी को सिख गुरुओं के साथ जुड़ा हुआ बताया है। श्रीमंत शंकरदेव जी और श्री गुरु नानकदेव जी दोनों महानुभावों के मूल्यबोध यात्राबोध से बनते हैं। देशाटन से बनते हैं। ये यात्राएं इनके धर्मबोध को बनाती हैं और यही धर्मबोध इनका भारतबोध है। आईडिया ऑफ इंडिया है। यह भारतबोध भारत को प्यार करने से बना है। आप किसी जगह पर क्यों जाते हैं? वहाँ के लोगों के बीच क्यों ठहरते हैं? उन्हें अपनी रचनात्मकता में क्यों जगह देते हैं? उत्तर है आपका राग आपसे ऐसा करवाता है। भक्तिआन्दोलन के प्रायः सभी संतों के यहाँ आप इस भारत राग को पढ़ सकते हैं। देश पर संकट है। देश को बचाना है। संकट क्या है? बल्लभाचार्य के शब्दों को उधार लें तो- म्लेक्षाक्रान्तेषु देशेषु। देश म्लेक्षाक्रांत है। आस्था के प्रतीक तोड़े जा रहे हैं। गुरु नानकदेव जी भी कहते हैं-

"खुरासान खसमाना किआ हिंदुस्तान डराइआ।

आपै दोसु न देई करता जनु करि मुगल चाइआ ॥

एती मार पई कुरलाने तें दरदु न आइआ ।"

शत्रु जब ताकतवर हो तो घर को ठीक करने की आवश्यकता प्रबल हो उठती है। घर सदस्यों के आत्मवलोकन से शुद्ध होता है। पूरी भक्ति कविता पंजाब से लेकर प्रागज्योतिषपुर तक आत्मवलोकन के भाव से प्रेरित है। यह आत्मवलोकन भारतवर्ष को शक्तिशाली देखने की कामना से प्रेरित है। यही कारण है कि सिख गुरुओं के यहाँ समरसता का स्वर है। एकता का स्वर है। आत्मगौरव का स्वर है। यह स्वर अपने पर भरोसा करने से पनपा है। ये संत भारत को शक्तिशाली होते देखना चाहते हैं। आसेतु हिमालय एक सांस्कृतिक राष्ट्र का सपना भक्ति का सपना है। इस सपने की प्रतिध्वनियाँ हम श्री गुरु नानकदेव जी

सहित सभी सिख गुरुओं के शिक्षण में सुन सकते हैं। मुझे लगता है कि एक शक्तिशाली सांस्कृतिक राष्ट्र के सपने के संदर्भ में भी सिख गुरुओं के पाठ का मूल्यांकन होना चाहिए। एक मूल्यांकन गुरुद्वारों के सामाजिक संदर्भ का भी होना चाहिए। आज जो भारत है उसके पीछे एक बहुत बड़ा योगदान गुरुद्वारों की संस्कृति का है। गुरुद्वारों ने आस्था को एक सामाजिक सन्दर्भ दिया। आस्था जागतिक समस्याओं से निरपेक्ष नहीं है। भूख से मुक्ति, स्वावलंबन, समरसता और आत्मनिर्भरता के प्रकल्प हैं गुरुद्वारा। 1526 ई. में बाबर के भारत पर आक्रमण का संकेत गुरु नानकदेव जी को मिल गया था। बाबर की आक्रमणकारी नीतियों से गुरु नानकदेव ने भारतीय राजाओं को सचेत किया लेकिन वे नहीं माने। इसका परिणाम भयानक सिद्ध हुआ। गुरु नानकदेव को बाबर का अत्याचार देखा नहीं गया। अन्ततः उन्होंने सिख मत की स्थापना की और लोगों को पाथिक अत्याचारों के विरुद्ध खड़ा किया। यही क्रम सिख मत के दसवें गुरु, गुरु गोबिंद सिंह तक चलता रहा। इसका भागीदार पूर्वोत्तर भारत भी बना। 'भारतबोध' पत्रिका का यह अंक इन्हीं भावों को प्रतिध्वनित करता है।

'भारतबोध' के इस अंक का पहला लेख प्रो. जगबीर सिंह कृत 'भारतीय ज्ञान परम्परा और गुरु नानक बाणी (दार्शनिक परिप्रेक्ष्य)' है। इस लेख में प्रो. सिंह ने भारत की सनातन ज्ञान परम्परा में गुरुनानक की 'खसम की बाणी' और 'सच की बाणी' के महत्व को चिह्नित किया है। परमात्मा ही सच है और सच ही परमात्मा है जैसे भाव ही गुरुनानक की दीक्षा के मूल स्वर हैं। इस अंक का अगला लेख प्रो. कपिल कपूर का है। प्रो. कपिल कपूर ने अपने लेख 'अकाल से खालसा तक' में सिख धर्म का संस्थापक गुरुनानक देव को बताया है और संकेत रूप में बाकी गुरुओं की भी चर्चा की है। सिख गुरुओं ने अपने धर्म को तीन मूल्यों पर केन्द्रित बताया है- ज्ञानमार्ग, कर्ममार्ग और भक्तिमार्ग। प्रो. कपिल कपूर ने इन तीन मूल्यों के यात्रा की व्याख्या की है। इस अंकमें संकलित डॉ. हरमोहिंदर सिंह बेदी कृत 'गुरु गोबिंद सिंह जी का विद्या दरबार 'लेख में गुरु गोबिंद सिंह से सम्बन्धित कवियों और उनकी रचनाओं का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। मनमोहन सिंह जी के लेख 'गुरु तेगबहादुर की बाणी दार्शनिक परिप्रेक्ष्य' में गुरु तेगबहादुर के मूल स्वर 'वैराग्य' की व्याख्या भारतीय सनातन पद्धति को आधार बनाकर की गई है। प्रो. करमजीत सिंह ने मुगल शासकों के अत्याचारों के प्रतिरोध के सन्दर्भ में गुरु तेगबहादुर जी द्वारा किए गए रचनात्मक प्रयासों का मूल्यांकन किया है। डॉ. अमृत कौर रैना के लेख 'आधुनिक संदर्भ में सिख गुरुओं के शैक्षणिक विचारों की सार्थकता' में सनातन धर्म के आध्यात्मिक, धार्मिक और नैतिक मूल्यों के साथ गुरुबाणी के संवाद की व्याख्या की है। डॉ. हरबंस कौर सागू के लेख 'गुरु नानकदेव जी की विश्वव्यापी यात्राएँ' में गुरु नानकदेव जी की यात्राओं के महत्व का उल्लेख है। प्रो. सुधीर कुमार का लेख 'गुरु गोबिंद जी (1666-1708) की सनातन धर्मो विश्व दृष्टि का वीर सावरकर (1883-1966) पर प्रभाव : "हिन्दुत्व" एवं "छः स्वर्णिम पृष्ठ" के विशेष संदर्भ में' स्वातंत्र्योत्तर भारत, विचारधारा, गुरु गोबिंद जी और वीर सावरकर की भारतीय सनातन दृष्टि के संदर्भ में मूल्यांकन करता है। तरुण विजय का लेख 'साका सरहिंद' गुरु गोबिंद सिंह जी के त्याग और बलिदान का मूल्यांकन है। डॉ. सुरजीत कौर जॉली का लेख 'आनंदपुर नगरी की स्थापना और पूर्व की यात्राएँ' में पावन नगरी आनंदपुर साहिब की संकल्पना और निर्माण-प्रक्रिया की व्याख्या है। डॉ. परमवीर सिंह का लेख 'गुरु तेगबहादुर जी पूर्वी भारत की यात्राएँ' में पूर्वी भारत के संदर्भ में सिख गुरुओं के

यात्राबोध, धर्मबोध और सांस्कृतिक-बोध की व्याख्या है। प्रो. रविंदर सिंह जी ने अपने लेख 'श्री गुरु तेगबहादुर जी के बलिदान की समकालीन प्रासंगिकता' में अद्वैतवादी दर्शन, आत्मानुशासन, भारतीय संस्कृति की शक्ति और सिख गुरुओं के बलिदान का मूल्यांकन किया है। डॉ. गुरजीत कौर का लेख 'श्री गुरु तेगबहादुर जी की वैराग बाणी का दार्शनिक संदर्भ' वैराग्य की सकारात्मक व्याख्या है।

'भारतबोध' के इस अंक में प्रो. पूरनचन्द टंडन, हरकीरत हीर, रुचिरा ढींगरा, आलोक सिंह, साधना गुप्ता, कुलमोहन सिंह, नीतू गुप्ता, विदुषी शर्मा, अवधेश कुमार, अग्निशेखर, संतोष बंसल, के.पी. सिंह, जगमोहन सिंह, वैभव सिंह, पपिन्दर सिंह, आदित्यनाथ तिवारी, जयरामदास, विवेक शर्मा और मणि कुमार के लेख संकलित हैं। इन सभी लेखों के द्वारा भारतीय समाज की सबलता के विविध सन्दर्भों में सिख गुरुओं के योगदान का मूल्यांकन है। कुछ लेख देश के पूर्वी राज्यों में सिख गुरुओं की यात्राओं पर केन्द्रित हैं। भारत का पूर्वी क्षेत्र सिख गुरुओं की कर्मण्यता के साथ संवाद करता है। इसका मूल्यांकन होना चाहिए। गुरु तेगबहादुर जी के 400 वें प्रकाश पर्व में 'प्राग्ज्योतिका' का यह लघु प्रयास है। यह प्रयास डॉ. शोभा कौर जी, डॉ. सीमा जैन, श्री नरेंद्र यादव जी, श्री विजय यादव जी, श्री अनुपम जी, श्री आदित्यनाथ तिवारी जी, श्री मणि कुमार जी, बिंदु जी, अपूर्वा जी, कुशाग्र जी, 'प्राग्ज्योतिका' की समीक्षा समिति और परामर्श मंडल से जुड़े विद्वतजनों की समवेत कर्मठता एवं सहयोग का सफल है। 'भारतबोध' के इस अंक के लिए मैं इन महानुभावों और इस अंक के लेखकों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। सभी को सादर प्रणाम।

- संपादक

प्रो. चंदन कुमार

कला संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली-110007